कर्म, आस्था और अविनाशी विश्वास की धरती काशी

वैसे तो यात्राएं मैं बहुत करता हूं, लेकिन आज जिस यात्रा का जिक्र यहां करूंगा वो हर व्यक्ति से जुड़ी हुई होगी। शहर बनारस या फिर वाराणसी कहिए, लेकिन मैं अपनी काशी यात्रा के बारे में बताऊंगा।

काशी जिसे मोक्ष की नगरी, शिव की स्थली और धर्म की राजधानी कहा जाता है। मेरे लिए केवल एक यात्रा नहीं, आत्मा से साक्षात्कार का निमंत्रण था, जब इस बार जब मैंने काशी की ओर रुख किया। वाराणसी रेलवे स्टेशन पर उतरते ही एक अजीब ऊर्जा ने मुझे घेर लिया। हवा में गंगा की नमी थी और कानों में शंखध्वनि की गूंज। मैंने निश्चय किया कि इस बार मैं केवल घाटों और विश्वनाथ मंदिर तक ही नहीं रुकूंगा, बल्कि उन जगहों की खोज करूंगा जो इतिहास के पन्नों में छिपी हैं।

शिवेंद्र सिंह बघेल
वायरल गुरु

कर्दमेश्वर महादेव मंदिर

वाराणसी की भीड़भाड़ और गलियों के बीच एक ऐसा स्थान है, जहां पहुंचते ही मन में शांति उतर आती है– कर्दमेश्वर महादेव मंदिर। यह मंदिर काशी के उन प्राचीन और कम चर्चित शिवालयों में से एक है, जिनके बारे में आम पर्यटक तो क्या कई स्थानीय लोग भी कम जानते हैं।

मैं एक सुबह गंगा आरती के बाद घाटों से होते हुए कर्दमेश्वर की ओर निकला। बनारस की संकरी गलियों में पैदल चलते हुए, पान की दुकानों की खुशबू, मंदिरों की घंटियों की धुन और गंगा के तट की ठंडी हवा, सभी मिलकर यात्रा को अद्भुत बना रहे थे। रास्ते में एक बुजुर्ग पंडित जी मिले, जिनसे बात करते हुए पता चला कि कर्दमेश्वर महादेव का महत्व स्कंद पुराण में भी वर्णित है। मान्यता है कि यहां स्वयं भगवान शिव ने कर्दम मुनि की तपस्या से प्रसन्न होकर प्रकट होकर उन्हें दर्शन दिए थे।

मंदिर पहुंचते ही सामने एक पुरातन शैली की संरचना नजर आई, जिस पर समय की परतें साफ झलकती थीं। द्वार पर नंदी महाराज विराजमान थे, जैसे आने-जाने वालों पर दृष्टि रखे हों। गर्भगृह में प्रवेश करते ही वातावरण में गूंजते "ॐ नमः शिवाय" के स्वर और जलाभिषेक की बूंदों की ठंडक ने तन-मन को भिगो दिया। वहां के पुजारी ने बताया कि सावन और महाशिवरात्रि के समय यहां विशेष मेला लगता है, लेकिन सामान्य दिनों में यहां का सन्नाटा और शांति ही इसकी असली पहचान है।

मंदिर के पीछे एक छोटा सा कुंड भी है, जिसके बारे में कहा जाता है कि कर्दम मुनि यहीं स्नान कर ध्यान लगाया करते थे। पानी में झांकते हुए लगा जैसे समय रुक गया हो। चारों ओर मंदिर की दीवारें, ऊपर नीला आसमान और मन में गूंजता शिव नाम।

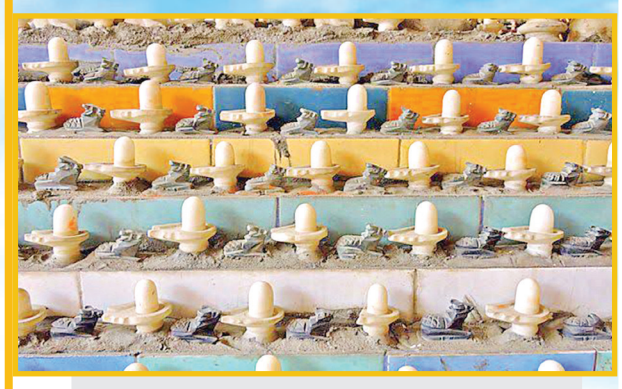

जंगमबाड़ी मठ

जंगमबाड़ी मठ, काशी का एक प्रमुख वीरशैव मठ है, जो दक्षिण भारत की दार्शनिक परंपराओं को उत्तर भारत से जोड़ता है। इस मठ में प्रवेश करते ही एक शांति का अनुभव होता है। यहां की दीवारों पर उकेरी गई लिपियां, ताम्रपत्र और योगी परंपरा के चिह्न उस काल की गाथा कहते हैं, जब संत ज्ञानेश्वर और बसवन्ना की वाणी उत्तर भारत में भी गूंजती थी। यहां पर बताया की लाखों की संख्या में शिवलिंग मौजूद हैं।

मठ के अंदर साधुओं का जीवन, तप और अनुशासन देखकर मन श्रद्धा से भर गया। हिंदी भाषा के कई ग्रंथ यहां के पुस्तकालय में सुरक्षित हैं, जिनमें भाषा, व्याकरण और दर्शन का अपूर्व समन्वय मिलता है।

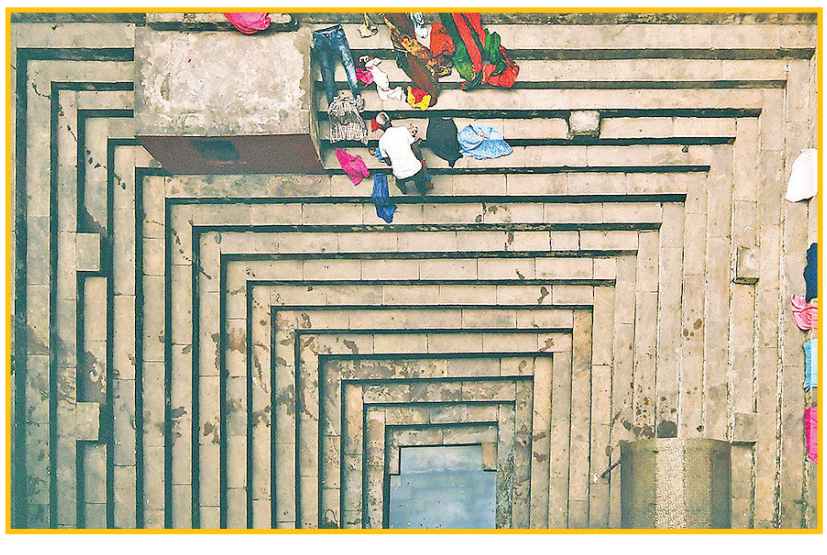

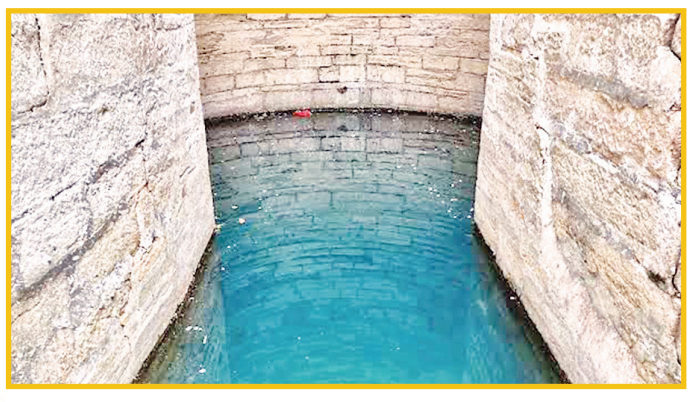

लोलार्क कुंड

लोलार्क कुंड का उल्लेख पुराणों में मिलता है। कहा जाता है कि यहां सूर्य देव स्वयं प्रकट हुए थे। यह कुंड 'संतान प्राप्ति' की कामना से जुड़ा है, विशेषकर लोलार्क छठ के अवसर पर यहां स्नान और पूजा का विशेष महत्व है। मैंने देखा–महिलाएं सिर पर दीप रखकर सीढ़ियों से उतर रही थीं। कोई तांबे के पात्र में जल भर रहा था, तो कोई तिल चढ़ा रहा था। श्रद्धा का वह दृश्य शब्दों में बांधना कठिन है।

इस स्थल की विशेषता यह है कि यह आस्था और विज्ञान का सम्मिलन है। कुंड की बनावट, जल का तापमान और उसकी संरचना में भारतीय वास्तुशास्त्र की स्पष्ट छाप दिखती है। यह नगरी जितनी प्राचीन है, उतनी ही नवीन। कर्दमेश्वर महादेव ने सिखाया कि कर्म ही पूजा है, जंगमबाड़ी ने दर्शन की गहराई से अवगत कराया और लोलार्क कुंड ने यह बताया कि आस्था, विज्ञान और परंपरा जब एकत्र होती हैं, तब काशी जन्म लेती है। यह यात्रा मेरे जीवन की एक पूर्ण विराम नहीं, बल्कि नवीन अनुच्छेद की शुरुआत है। काशी से जुड़े रहने की, उसे समझने की और आत्मा से जुड़ने की।

अनुभूति

ऑरेंज आर्मी

पिछले हफ्ते जब भारी बारिश के कारण लगभग हर नदी अपने उफान पर थी। आसमान से बरसती मूसलधार बूंदें और धरती पर बहता पानी, हर तरफ एक अजीब-सा सन्नाटा और खौफ पैदा कर रहा था। इन हालातों में रात की ड्यूटी करना हमेशा से सबसे मुश्किल होता है। उन्हीं दिनों एक रात मेरी ड्यूटी बरेली सिटी-पीलीभीत पैसेंजर में थी। देवहा नदी का पुल रास्ते में पड़ता है। नदी उफान पर थी, लहरें मानो चेतावनी दे रही हों कि नदी से दूर रहने में भी भलाई है।

इंजन के शीशे पर जब बारिश की बूंदें 110 किमी की रफ्तार से टकराती हैं तो सामने का नजारा एकदम धुंधला हो जाता है। ऊपर से रात का अंधेरा हो तो रास्ता और भी डरावना लगता है। ऐसे में दिल बार-बार यही सोचता है, कहीं ट्रैक धंस न गया हो, कहीं पुल की मिट्टी बह न गई हो। हर क्षण एक अनदेखा डर साथ चलता रहता है। जब भी पुल पर या ट्रैक के किनारे नारंगी ड्रेस पहने ट्रैक मैन की एक परछाई नजर आती है, तो दिल को एक अलग सा सुकून मिल जाता है। वो धुंधली सी तस्वीर बताती है कि 'आगे सब सही है।' यही वो इंसान होते हैं, जो आधी रात, तूफान, ठंडी, गर्मी या बारिश हर मौसम में हमारी और यात्रियों की सुरक्षा के लिए डटे रहते हैं। वहीं नाइट पेट्रोलिंग करते गैंगमैन, ट्रैकमैन और कीमैन, जो खुद हमारे सफर में हमारे साथ नहीं बैठते, लेकिन हमें मंजिल तक सुरक्षित पहुंचाने के लिए हर पल साथ खड़े रहते हैं। ट्रेन जब भी उनके पास से गुजरती है, हम लंबा हॉर्न देते हैं ताकि वो सतर्क हो जाएं। बदले में वो हमें बिना जाने-पहचाने, बस इंसानियत और अपने फर्ज के नाते, एक हाथ उठाकर अभिवादन करते हैं।

ये रिश्ता बड़ा अजीब है, न नाम जानते हैं, न कभी ठीक से मिले हैं। सालों से यही रिश्ता चलता आ रहा है। शायद कभी मंजिल पर जाकर उनसे मुलाकात हो जाए, शायद कभी न हो, लेकिन सफर के रास्ते हमेशा हमारे और उनके सांझा रहते हैं। सच कहूं तो जब भी रात के अंधेरे में नारंगी ड्रेस वाली वो परछाई दिखती है, तो लगता है कि चलो आगे का रास्ता सही है। कभी-कभी सोचता हूं, हम लोको पायलट तो सबके सामने रहते हैं, लोग हमें पहचानते हैं। मगर ऑरेंज आर्मी वाले साए का कोई नाम नहीं, कोई पहचान नहीं। वो चुपचाप अपने हिस्से का फर्ज निभाकर अगली रात फिर उसी रास्ते पर खड़े मिल जाते हैं। जिंदगी में न जाने कितनी मंजिलें बदलती रहती हैं, कितने सफर पूरे होते रहते हैं, लेकिन उनके साथ जुड़ा ये मौन रिश्ता कभी नहीं बदलता। वो हमारे सफर के अनकहे, अनजाने साथी हैं, जिन्हें हम कभी धन्यवाद तक नहीं कह पाते। शायद यही उनकी सबसे बड़ी महानता है।

रवि
ब्लॉगर

सांझी: ब्रज की लोक चित्रांकन कला

सांझी को ब्रज की लोक देवी माना गया है। यह ब्रज संस्कृति की उपासना का प्रमुख अंग है। ब्रज के अनेक देवालयों में इसे आश्विन कृष्ण प्रतिपदा से आश्विन कृष्ण अमावस्या तक अंकित किया जाता है। इसके मध्य में भगवान श्रीकृष्ण से संबंधित विभिन्न लीलाओं का भी अंकन किया जाता है। यह ब्रज की लोक चित्रांकन कला है। इसमें सूखे रंगों, फूलों व गोबर आदि के प्रयोग से अष्टकोणीय रूप में ज्यामितीय आकार की विभिन्न दृश्यावलियां फर्श, दीवार व कागज आदि पर बनाई जाती हैं। चूंकि सांझी का आशय संध्या से है, इसलिए इसके दर्शन सायं काल ही होते हैं। पितृ पक्ष में इनके बनाए जाने का प्रमुख कारण यह है कि एक तो इन दिनों यहां विभिन्न प्रकार के फूल सहजता से प्राप्त हो जाते हैं। अतएव यह कला ब्रज में पितृ पक्ष का विशेष उत्सव है। ब्रज के नगरीय क्षेत्रों में सूखे रंगों एवं ग्रामीण अंचलों में गोबर से इस कला का चित्रांकन बहुतायत से होता है। इसे तेल व जल के अंदर एवं तेल व जल के ऊपर भी एक विशेष तरीके से बनाया जाता है। फूलों से सांझी बनाए जाने का इतिहास 5000 हजार वर्षों से भी अधिक पुराना है।

डॉ. गोपाल चतुर्वेदी
वरिष्ठ साहित्यकार

सांझी बनाने की कला

सांझी बनाने हेतु सर्वप्रथम अष्टकमल आकर में पीली मिट्टी की वेदी बनाई जाती है। अष्टकमल अष्टसखियों का प्रतीक हैं। तत्पश्चात ज्यामिती आकार में डिजाइन डाली जाती है। इसमें सतिया–स्वस्तिवाचक के रूप में, सात बिंदी–सप्तऋषियों के प्रतीक के रूप में और केला रुद्र पूजा के रूप में अंकित किए जाते हैं। इसके बाद इन्स्टेंसिल लगाकर तरह–तरह के रंगों को डाली गई डिजाइनों के अंदर छाना जाता है। सबसे अंत में सांझी के मध्य 'होंद' बनाया जाता है, जिसमें रंगों के द्वारा भांति–भांति के दृश्य चित्रित कर उनके मध्य राधा–कृष्ण का युगल चित्र लगाया जाता है। चार पांच व्यक्ति दिनभर कठोर परिश्रम से कार्य करने के बाद सायं तक एक सांझी तैयार कर पाते हैं। तत्पश्चात उसका ठाकुर जी के विग्रह की भांति अत्यंत विधि–विधान से भोग लगाया जाता है और उसकी आरती होती है। इसके बाद उसके दर्शन सभी के लिए खुलते हैं, जो कि रात्रि को मंदिर के पट बंद होने के तक खुले रहते हैं। प्रातः काल मंदिर की मंगला आरती के समय इसके दर्शन पुनः कराए जाते हैं। इसके बाद वेदी व राधा–कृष्ण की युगल छवि को छोड़कर पूरी सांझी बिगाड़ दी जाती है। अगले दिन कठिन परिश्रम के बाद विभिन्न दृश्यावलियों से सुसज्जित दूसरी सांझी बनाई जाती है। पितृ विसर्जन अमावस्या को प्रत्येक दिन की सांझी में प्रयुक्त होने वाले फूलों, रंगों आदि सामग्री को यमुना में विसर्जित कर दिया जाता है। ब्रज के ग्रामों में गोबर से भी सांझी बनाई जाती है।

कष्ट और श्रम साध्य कला

तत्पश्चात उन्हें फूलों व कौड़ियों आदि से सजाया जाता है। इस समय अधिकांशतः सूखे रंगों के द्वारा ही सांझी बनाई जाती है। ब्रज की अधिकांशतः कुंवारी कन्याएं श्रेष्ठ वर प्राप्त करने के उद्देश्य से भी सांझी बनाती हैं और व्रत भी रखती हैं। सांझी बनाया जाना अत्यंत कष्ट साध्य व श्रम साध्य कला है। क्योंकि इसे भक्ति भावना के साथ बनाया जाता है, इसलिए इसको जमीन पर बनाने वाले कलाकार इसे लकड़ी की तख्तियों पर बैठकर एवं घंटों झुके रहकर जमीन पर बिना पैर रखे बनाते हैं। वृंदावन के भट्ट जी मंदिर, राधावल्लभ मंदिर व राधारमण मंदिर आदि में पितृ पक्ष के दौरान अत्यंत चित्ताकर्षक व नयनाभिराम सांझी बनाई जाती है। वृंदावन के प्राचीन ब्रह्म कुंड पर पितृ पक्ष के पूरे 15 दिन सांझी का मेला लगता है। इसमें प्रतिदिन सांझी बनाने वाले कलाकार अपनी कला का हुनर दिखाते हैं। बाद को इन्हें पुरस्कृत भी किया जाता है। इस समय राधारमण मंदिर के सेवायत सुमित गोस्वामी एवं प्रियावल्लभ मंदिर के सेवायत रसिक वल्लभ नागार्च आदि की गिनती सांझी बनाने वाले प्रमुख कलाकारों में की जाती है।

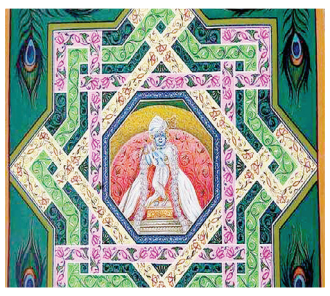

पौराणिक कथाओं के अनुसार

पौराणिक कथाओं के अनुसार राधा रानी मानिनी देवी थीं, इसलिए श्रीकृष्ण ने प्रायः अपनी सभी लीलाएं राधा रानी को मनाने के लिए की थीं। परंतु राधा रानी ने श्रीकृष्ण को रिझाने के लिए कुछ ही लीलाएं की थीं, सांझी उन्हीं में से एक है। सांझी राधा–कृष्ण के प्रेम का प्रतीक है। इसीलिए ब्रज में सांझी को राधा रानी का प्रतिरूप मानकर संध्या के समय उनकी उसी प्रकार पूजा–अर्चना की जाती है, जिस प्रकार ब्रज के मंदिरों में ठाकुर विग्रहों की पूजा–अर्चना होती है। सांझी कला राधा–कृष्ण के प्रेम की चरमतम अवस्था की परंपरा है, जो कि ब्रज में ही संजोयी गई है और विकसित हुई है। अष्टकोण में निहित होने एवं राधा रानी की कला होने के कारण इसे 'वैष्णव यंत्र' भी कहा गया है। सांझी कला ब्रज की लोक संस्कृति में निहित है। इसे प्रति वर्ष महोत्सव के रूप में मनाया जाता है। सांझी पर अनेक संतों, रसिकों व भक्तों आदि ने सैकड़ों पदों की रचना की है, जिनमें रसखान, सूरदास, हित हरिवंश महाप्रभु एवं भारतेंदु हरिश्चंद्र आदि प्रमुख हैं।

बतकही

सह-अस्तित्व : कुत्ते और इंसान

देशभर में कुत्तों पर चर्चा हो रही थी। कुछ लोग कुत्तों के विरोध में उतर आए थे और कुछ पक्ष में। मेरी कॉलोनी में भी पहले दो-तीन स्ट्रीट डॉग्स होते थे, जिनसे कोई परेशानी नहीं थी। अब 10-12 स्ट्रे डॉग्स हैं, जिनमें से एक दो खतरनाक हैं। शायद पहले किसी के पाले हुए कुत्ते रहे होंगे। ये बाइक और स्कूटी वालों के पीछे भागते हैं व कई लोगों ने बच्चों पर झपटने की शिकायत भी की है। सभी जगह यही हाल है। रात में तो ये बहुत खूंखार हो जाते हैं।

भूले-भटके कभी नगर पालिका या नगर निगम इन्हें स्टरलाइजेशन के लिए ले जाना चाहें तो मोहल्ले के लोग ही ले जाने नहीं देते। रिजल्ट यह कि इनकी संख्या में दिनों-दिन वृद्धि होती जा रही है। गलियों में झूठा खाना और मल-मूत्र पड़ा रहता है, जिसके साथ जीना नियति बन गई है। खैर गली का मामला है। बैर मोल नहीं लेना। आपसी समझदारी जरूरी है। जिंदगी चल रही है इसी के साथ। पालतू कुत्तों की बात करें तो 'लव मी लव माय डॉग' वाली पॉलिसी अधिकतर कुत्ता पालकों की होती है। इसी सिलसिले में एक पुरानी घटना याद आ रही है। स्मार्ट सिटी बनने जा रहे एक बड़े शहर की। एक परिचित दो-तीन बार घर आ चुके थे और बार-बार अपने घर आने का आग्रह करते थे। एक बार हम दोनों पति-पत्नी उनके घर चले गए तो महाशय के साथ तीन कुत्तों ने हमारा स्वागत किया। एक जर्मन शेफर्ड, एक लैबराडोर और तीसरे की नस्ल याद नहीं। कुछ याद रखने जैसा माहौल ही नहीं था। भाईसाहब बोले कि मेरे पीछे सीधे चलते हुए आना, उनकी तरफ मत देखना। मन तो था पर कहने की हिम्मत न हुई कि हम वापस जा रहे हैं। खैर, उनके आदेशों का त्वरित पालन किया। किसी तरह ड्राइंग रूम में पहुंचकर सोफे में बैठे।

बातचीत का सिलसिला कुत्तों से ही शुरू हुआ। भाईसाहब ने बताया कि यह हमेशा खुले ही रहते हैं। उनके नाम ले लेकर उनकी क्वालिटी बताने लगे। सफेद रंग का लैब्राडोर बिल्कुल सीधा-साधा। दूसरा छोटे साइज का काफी खतरनाक। तीसरा जर्मन शेफर्ड तो कई बार घर आए लोगों को काट भी चुका है। उन्होंने बहुत हंसते-हंसते बताया कि एक काफी वृद्ध महिला की हथेली में जर्मन शेफर्ड ने अपना दांत आर-पार कर दिया। सुनकर हम दोनों तो बहुत भयभीत हो गए पर उस वक्त उन्हीं की दया पर निर्भर थे। जैसे बैठे थे वैसे ही बैठे रहना था। उन्होंने बताया कि अगर हमने सोफे के कपड़े को ठीक करने की कोशिश की या टेबल से कोई भी चीज उठाने या देखने की कोशिश की तो यह तुरंत काट लेगा। शोक ग्रस्त होकर कहिये या किसी राष्ट्रीय त्योहार के तहत राष्ट्रगान गाने जैसे हम अटेंशन में बैठे हुए थे। हाथ-पैर चिपके थे और होंठ भी खुलने का साहस नहीं कर रहे थे। चाय नाश्ता भी आया, लेकिन डरते-डरते चाय का कप उठाया और खत्म होने पर बहुत ही सावधानी के साथ टेबल पर रखा। नाश्ते को तो छूने का सवाल ही नहीं होता।

कुत्तों से मुझे नफरत नहीं है, पर बेतहाशा प्यार भी नहीं। सदियों से यहां सह-अस्तित्व जीवन परंपरा का हिस्सा रहे हैं। मगर यह भी जरूरी है कि एक दूसरे को नुकसान पहुंचाए दोनों का अस्तित्व और जीवन की मर्यादा बनी रहे। सह-अस्तित्व की इस धारणा में कई बार कुत्तों के सामने इंसान का कद बौना हो जाता है। ऐसे लोगों को देखकर बहुत आश्चर्य होता है कि जो मेहमानों के आने पर भी कुत्तों को बांधना जरूरी नहीं समझते। वह मेहमानों को चुम्मा-चाटी करता रहे तो दांत खोलकर हंसते रहेंगे। जरूरी नहीं हर कोई यह पसंद करता हो।

इसी तरह सुबह-सवेरे कुत्तों को घुमाने वाले लोग भी जगह-जगह सड़क में गंदगी करवाते हैं। भारी भरकम कुत्ते को वह नहीं घूमाते,बल्कि कुत्ता उन्हें घुमाता है। पूरा दम लगाकर भी वे उसे कंट्रोल नहीं कर पाते। कई तो ऐसे भी हैं, जो उन्हें खुला छोड़ देते हैं। कोई डरे, किसी को काटे उनकी बला से। न बाहर के देशों की तरह यहां पर सजा का प्रावधान, न अगला इतना समझदार कि इलाज का पूरा प्रबंध कराए। बचकर निकलने में ही फायदा है। अगर बच सके तो...

अमृता पांडे
लेखिका